शीर्षक:-ईर्ष्या और अज्ञानता : मनुष्य की सबसे बड़ी अंधता

-सविता प्रभाकर

(प्रधानाचार्या)

एस.के.वि.2 मोलरबंद

नई दिल्ली -44

"अज्ञान आँखों पर पट्टी नहीं बाँधता, वह मन पर पर्दा डाल देता है और ईर्ष्या उस पर्दे को इतना घना कर देती है कि मनुष्य अपने सामने खड़े सत्य को भी पहचान नहीं पाता।"

मनुष्य को सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी इसलिए नहीं कहा गया कि वह सबसे अधिक शक्तिशाली है बल्कि इसलिए कि उसके पास विवेक है। यही विवेक उसे सत्य और असत्य, उचित और अनुचित, मित्र और शत्रु के बीच भेद करना सिखाता है। किंतु जब मन पर अज्ञानता का अंधकार और ईर्ष्या का विष छा जाता है तब यही विवेक नष्ट होने लगता है। परिणामस्वरूप मनुष्य उस व्यक्ति को भी अपना शत्रु समझ बैठता है जो वस्तुतः उसका शुभचिंतक होता है। स्पष्टवादिता उसे कटुता लगती है।सत्य उसे अपमान प्रतीत होता है और किसी दूसरे की सफलता उसे अपनी पराजय दिखाई देती है। यही मनुष्य की सबसे बड़ी मानसिक अंधता है।

ईर्ष्या का जन्म दूसरों की उन्नति से नहीं बल्कि अपनी असंतुष्टि से होता है। जो व्यक्ति स्वयं से संतुष्ट नहीं होता, वही दूसरों की उपलब्धियों से व्याकुल होता है। उसे किसी की सफलता में प्रेरणा नहीं, बल्कि चुनौती दिखाई देती है। वह यह नहीं देखता कि सफलता के पीछे वर्षों का संघर्ष, अनुशासन, त्याग और तपस्या छिपी है। उसकी दृष्टि केवल फल पर जाती है, कर्म पर नहीं। इसलिए वह व्यक्ति के गुणों की उपेक्षा करता है और उसकी कमियों की खोज में लग जाता है। धीरे-धीरे यह प्रवृत्ति आलोचना से द्वेष और द्वेष से शत्रुता में बदल जाती है।

अज्ञानता इस रोग को और भी गहरा बना देती है। ज्ञान मनुष्य को विनम्र बनाता है जबकि अज्ञान उसे अहंकारी बना देता है। अज्ञानी व्यक्ति को लगता है कि वही सर्वज्ञ है इसलिए जो उससे भिन्न विचार रखता है। वह उसका विरोधी है। वह तर्क नहीं सुनता केवल अपनी मान्यता को सत्य मानता है। ऐसे व्यक्ति के लिए स्पष्टवादी मनुष्य सबसे अधिक असुविधाजनक होता है क्योंकि सत्य उसके भ्रम को तोड़ देता है इसीलिए इतिहास में अनेक बार सत्य बोलने वालों को सम्मान से अधिक विरोध मिला।

विडंबना यह है कि समाज अक्सर उस व्यक्ति का विरोध करता है जो उसके हित की बात करता है। जो चापलूसी करता है वह प्रिय बन जाता है।

जो सच कहता है, वह अप्रिय हो जाता है। कारण यह नहीं कि सत्य में दोष है बल्कि यह कि सत्य आत्मपरीक्षण की माँग करता है औरआत्मपरीक्षण सबसे कठिन कार्य है। अपने दोष स्वीकार करने से सरल है—सत्य बोलने वाले को ही दोषी ठहरा देना।

आज का समाज इस मानसिकता का जीवंत उदाहरण है। विद्यालयों में मेधावी छात्र, कार्यालय में ईमानदार कर्मचारी, साहित्य में मौलिक लेखक और समाज में निडर विचारक—इन सबको अक्सर अनावश्यक आलोचना का सामना करना पड़ता है। लोग उनकी उपलब्धियों से प्रेरणा लेने के स्थान पर उनकी छोटी-सी भूल को बड़ा बनाकर प्रस्तुत करते हैं। यह प्रवृत्ति केवल व्यक्ति का नहीं, पूरे समाज का नुकसान करती है, क्योंकि जहाँ योग्यता का सम्मान नहीं होता, वहाँ प्रतिभा धीरे-धीरे मौन हो जाती है।

इतिहास साक्षी है कि सत्य को दबाया जा सकता है पराजित नहीं किया जा सकता। जिन व्यक्तियों का कभी उपहास उड़ाया गया, समय ने उसी उपहास को सम्मान में बदल दिया। सत्य का मूल्य तत्काल नहीं अंततः समझ में आता है। समय सबसे निष्पक्ष न्यायाधीश है, वह ईर्ष्या और अज्ञानता के शोर को शांत करके केवल सत्य की आवाज़ को शेष रहने देता है।

वास्तव में ईर्ष्या का सबसे बड़ा शिकार दूसरा व्यक्ति नहीं स्वयं ईर्ष्यालु मनुष्य होता है। वह अपनी शांति खो देता है, अपने संबंध खो देता है और सबसे बढ़कर अपने विकास की संभावना खो देता है। दूसरों की कमियाँ खोजते-खोजते वह अपनी कमियों से अनजान रह जाता है। इसके विपरीत, जो व्यक्ति दूसरों के गुणों से सीखता है, वही निरंतर आगे बढ़ता है। महानता किसी को छोटा सिद्ध करने में नहीं बल्कि स्वयं को श्रेष्ठ बनाने में है।

इस समस्या का समाधान बाहरी संसार में नहीं, मनुष्य के भीतर है। जब शिक्षा केवल डिग्री न रहकर विवेक बनती है, जब सफलता केवल प्रतिस्पर्धा न रहकर प्रेरणा बनती है और जब सत्य को अपमान नहीं बल्कि आत्मविकास का अवसर माना जाता है, तभी समाज स्वस्थ दिशा में आगे बढ़ता है। हमें अपने बच्चों को यह सिखाना होगा कि किसी की उपलब्धि हमारी हार नहीं है और स्पष्टवादिता शत्रुता नहीं, सच्ची मित्रता का स्वरूप है।

अंततः यही कहा जा सकता है कि ईर्ष्या और अज्ञानता मनुष्य की आँखें नहीं, उसकी दृष्टि छीन लेती हैं। वे उसे इतना संकीर्ण बना देती हैं कि वह अपने सामने खड़े प्रकाश को भी अंधकार समझने लगता है। इसलिए आवश्यक है कि हम ज्ञान का दीप जलाएँ, विनम्रता को अपनाएँ और दूसरों के गुणों का सम्मान करना सीखें। जिस दिन मनुष्य किसी की सफलता से जलने के बजाय उससे सीखने लगेगा, उसी दिन उसके भीतर का अंधकार समाप्त हो जाएगा।

कहा भी गया है—

"दीपक कभी दूसरे दीपक का प्रकाश कम नहीं करता; वह केवल अंधकार को कम करता है। मनुष्य भी तभी महान बनता है, जब वह दूसरों की प्रतिभा से ईर्ष्या नहीं, प्रेरणा ग्रहण करता है।"